# एक बाग़ नहीं, एक खेत नहीं, हम सारी दुनिया माँगेंगे : 37वाँ न्यूज़लेटर (2020)।

सुनील जानाह, तेलंगाना सशस्त्र संघर्ष के दौरान मल्लू स्वराज्यम और सशस्त्र दस्ते के अन्य सदस्य, 1946-1951।

प्यारे दोस्तों,

**ट्राईकॉन्टिनेंटल : सामाजिक शोध संस्थान** कि ओर से अभिवादन।

1917-1918 में जब ज़ार साम्राज्य में शुरू हुई क्रांति की ख़बर ब्रिटिश-हुकूमत वाले भारत तक पहुँची, तो सभी ने जोश के साथ इसका स्वागत किया : अगर वे ज़ार को उखाड़ फेंक सकते हैं, तो हम भी ब्रिटिश राज को उखाड़ फेंक सकते हैं। लेकिन बात केवल अंग्रेज़ों को हटाने के बजाये एक सामाजिक क्रांति की दिशा में आगे बढ़ चुकी थी। बॉम्बे में एक उदारवादी समाचार पत्र ने लिखा, 'सच्चाई ये है कि बोल्शेविज़्म लेनिन या किसी एक आदमी का आविष्कार नहीं है। यह उस आर्थिक प्रणाली का अमानवीय उत्पाद है जिसमें लाखों लोगों को जीवन भर मेहनत करनी पड़ती है ताकि कुछ हज़ारों

लोग आराम से रह सकें।' उस आर्थिक प्रणाली -पूँजीवाद- ने अपार धन का निर्माण किया था, लेकिन वो धन उसे पैदा करने वाले अरबों लोगों की जीवन-स्थिति में सुधार नहीं कर सका।

1917 की अक्टूबर क्रांति से प्रेरित भारतीय मज़दूर हड़ताल के बाद हड़ताल कर रहे थे, और आख़िरकार 1920 में ऑल इंडिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस का गठन हुआ। अक्टूबर क्रांति से उत्पन्न ऊर्जा और लगातार हड़तालों से बने माहौल में, आज से सौ साल पहले भारतीय कम्युनिस्ट आंदोलन के निर्माण की परिस्थितियाँ निर्मित हुईं। बर्लिन से लेकर टोक्यो तक निर्वासन में रह रहे क्रांतिकारियों और भारत के भीतर के क्रांतिकारियों ने (सोवियत संघ में) ताशकंद की ओर रुख़ किया, जहाँ उनके साथियों ने 17 अक्टूबर 1920 को भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी का गठन किया था।

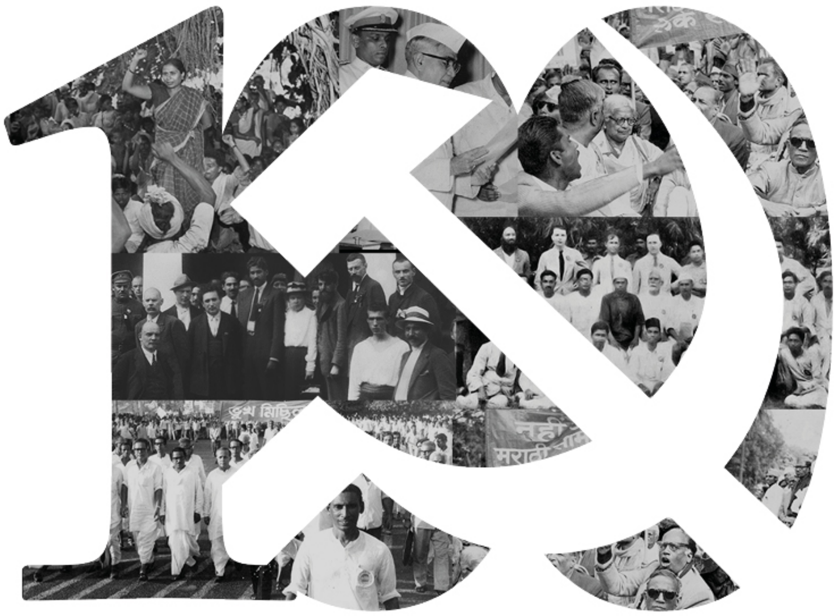

हमारा **डोजियर संख्या 32** (सितंबर 2020) भारत के कम्युनिस्ट आंदोलन के एक सौ साल का संक्षिप्त इतिहास है। लाखों भारतीय कम्युनिस्टों के संघर्षों और चुनौतियों को संक्षेप में प्रस्तुत करना आसान नहीं है। यह डोज़ियर एक ऐसे देश में क्रांतिकारी सक्रियता की जटिल लेकिन प्रतिबद्ध दुनिया से हमारा परिचय कराता है ; जहाँ हाल ही में, केवल एक दिन में मिले कोविड-19 के मामले चीन में महामारी के दौरान सामने आए कुल मामलों से ज़्यादा हो गए।

मौजूदा समय में कम्युनिस्टों की भूमिका पर बातचीत करना लोगों में संदेह पैदा कर सकता है, क्योंकि लोग इस परंपरा की प्रासंगिकता पर सवाल उठाने लगे हैं। लेकिन हमारे ही समय में, महामारी के बावजूद, फ़ैक्ट्रियों और खेतों में, कॉल सेंटरों और दफ़्तरों में श्रमिक पहले ही जैसी दमनकारी परिस्थितियों में वस्तुओं और सेवाओं का उत्पादन कर रहे हैं। पूँजीवाद  सामाजिक उत्पादन और निजी संपत्ति के विरोधाभास के बीच झूलता रहता है। पूँजी -यानी धन के ऊपर धन बनाने की अंतहीन प्यास- उत्पादन की सभी शक्तियों को प्रभावी ढंग से एक ऐसी संगठित सामाजिक प्रक्रिया में व्यवस्थित कर देती है, जहाँ मालिकों को अधिकतम लाभ लेकिन श्रमिकों को न्यूनतम संभव मज़दूरी मिलती है। सामाजिक उत्पादन का उल्लेखनीय नेटवर्क वस्तुओं को एक जगह से दूसरी जगह ले जाने के लिए, दुनिया के एक हिस्से के श्रमिकों को दूसरे हिस्से के श्रमिकों से जोड़ता है। लोगों को एक साथ जोड़ना और उनके लिए एक-दूसरे के श्रम से बनी वस्तुओं का इस्तेमाल सुलभ बनाना इस नेटवर्क का वादा था।

कम्युनिस्ट नेता एस.एस मिराजकर, जो उस समय बॉम्बे के मेयर थे, की अध्यक्षता में संयुक्त महाराष्ट्र समिति के सदस्यों ने 1958 में संसद भवन, नयी दिल्ली के सामने प्रदर्शन किया।

लेकिन, समस्या यह है कि पूँजीवाद की अपार उत्पादकता निजी संपत्ति की नींव पर खड़ी है। पूँजी, निरंतर मुनाफ़े की तलाश में बेचैन रहती है। श्रम का शोषण करके ही, पूँजी उत्पादन प्रक्रिया को नियंत्रित करने और अधिशेष मूल्य बनाने में सक्षम होती है। इस तरह से निजी पूँजी सामाजिक उत्पादन की प्रणाली को नियंत्रित करती है, और इससे बने सामाजिक धन का मामूली हिस्सा असल हक़दारों को देकर अधिकतर ख़ुद हड़प लेती है।

उत्पादन प्रक्रिया पर पूँजी का नियंत्रण मानव श्रम की रचनात्मक शक्ति को फलने-फूलने से रोकता है। मुनाफ़ा का दबाव, निजी संपत्ति की चाहत, श्रमिकों से अधिक-से-अधिक काम लेना चाहता है। जबकि उत्पादन के सामाजिक संबंधों द्वारा थोपी गई नियमितता, आज्ञाकारिता, और अनुरूपता की माँग श्रमिकों की कुशलता को दबाकर रखती है।

ग़रीबी इस व्यवस्था का दुर्भाग्यपूर्ण परिणाम नहीं, बल्कि इसका आवश्यक उत्पाद है। ग़रीबी ख़त्म हो, ये सबका सपना है। लेकिन, ग़रीबी मिटाने के लिए कल्याण और दान-पुण्य करने से कहीं ज़्यादा कुछ करने की ज़रूरत है। दान और

कल्याणकारी रवैया दुख को एक बार के लिए हल्का तो कर सकता है, पर इससे अधिक कुछ नहीं कर सकता। भारत के नये कम्युनिस्टों को ये बात समझ में आ गई थी कि अंग्रेज़ों की हुकूमत हटाकर भारतीय पूँजीपतियों को देश पर शासन करने की अनुमति देना पर्याप्त नहीं होगा ; क्योंकि उनके द्वारा किया गया दान पीढ़ी-दर-पीढ़ी बनी रहने वाली ग़रीबी को नहीं रोक पाएगा। निजी संपत्ति की व्यवस्था को उखाड़ फेंकने के लिए और समाजवादी सिद्धांतों पर आधारित उत्पादन प्रणाली विकसित करने के लिए उत्पादक वर्गों को संगठित करने की आवश्यकता थी। यही वो ज़रूरत है जिससे भारतीय कम्युनिस्ट -जिनकी कहानियाँ हमारे डोज़ियर में शामिल हैं- और दुनिया भर के वामपंथी प्रेरित होते रहे हैं।

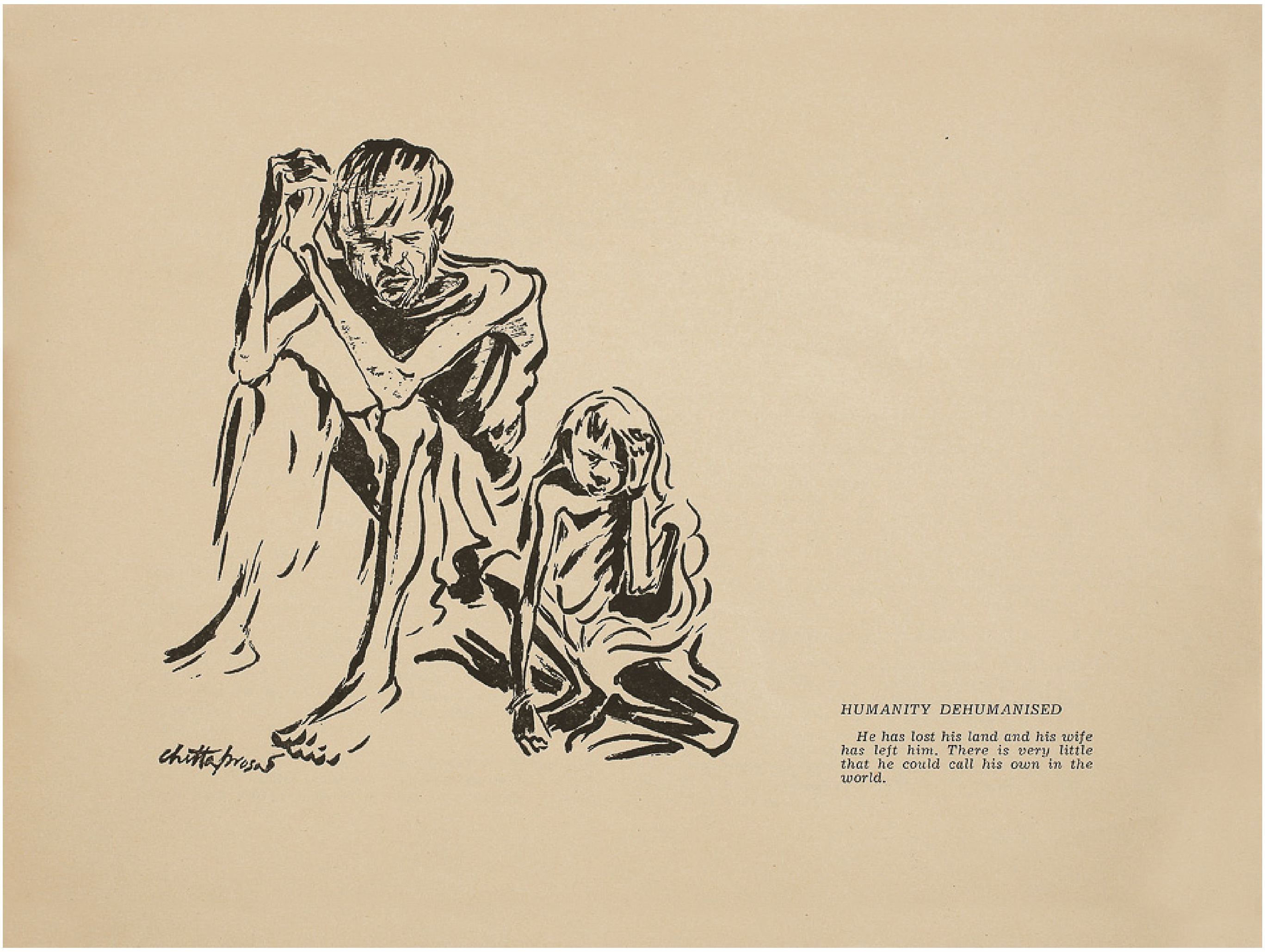


चित्तप्रसाद, भूखा बंगाल, 1945।

जुलाई 1921 में, कम्युनिस्ट इंटरनेशनल ने दुनिया भर के कम्युनिस्टों के लिए नियम और परामर्श तैयार किया। इनमें से ज़्यादातर नियम सरल हैं। इनमें शामिल एक अहम सलाह यह है कि : 'किसी कम्युनिस्ट पार्टी के लिए, ऐसा कोई समय नहीं होता जब पार्टी संगठन राजनीतिक रूप से सक्रिय न रह सके।' सत्तर साल बाद, जब सोवियत संघ विघटित हुआ और दुनिया के कम्युनिस्ट आंदोलन को इससे बहुत नुक़सान हुआ, तब यह सलाह बेहद उपयोगी साबित हुई। कहा गया कि इतिहास ख़त्म हो गया है : पूँजीवाद ने साबित कर दिया है कि वो शाश्वत है और उसे हराया नहीं जा सकता है।

अपने अंतर्निहित विरोधाभासों का सामना करने और स्थानीय सामाजिक समस्याओं को हल करने में असमर्थ पूँजीवादी व्यवस्था, 1989 से एक के बाद एक संकट से घिरती जा रही है। अपनी सदियों पुरानी लय द्वारा संचालित मार्क्सवाद इस व्यवस्था का विश्लेषण करने के लिए आज भी एक ज़रूरी वैचारिक ढाँचा है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि पूँजीवाद कई तरीक़ों से बदला है, जैसे कि आज के पूँजीवाद में वित्त की ख़ास भूमिका है ; लेकिन आज भी पूँजीवाद सामाजिक उत्पादन और निजी लाभ की प्रणाली द्वारा चलता है जिसमें उत्पादन व संचय पर पूँजी की अपार शक्ति बरक़रार है। काम और जीवन की कठोर परिस्थितियाँ, श्रम के घंटों और काम के परिमाण को लेकर होने वाले संघर्ष, बेरोज़गारी और भुखमरी, हमारी सामाजिक व्यवस्था में वर्ग शोषण की केंद्रीयता को उजागर करते हैं। ये परिस्थितियाँ वामपंथी पार्टियों को 'राजनीतिक रूप से सक्रिय' रहने और ठोस माँगों के लिए लड़े जा रहे असंख्य संघर्षों का विस्तार कर, एक बड़ा और मज़बूत आंदोलन बनाने का आह्वान करती हैं। बढ़ते संघर्ष के साथ, पूँजीपतियों और सरकारों की प्रतिक्रिया भी बढ़ती है। उनकी हर प्रतिक्रिया -आम तौर पर पुलिस की हिंसा- से राजनीतिक संघर्ष की ज़रूरत स्पष्ट होती है। ऐसा संघर्ष जिसे मज़दूर वर्ग केवल कोई सुधार करवाने के लिए नहीं, बल्कि ग़रीबी को पैदा करने और बढ़ावा देने वाली मौजूदा व्यवस्था को बदलने के लिए लड़े। पूँजीवादी व्यवस्था में ग़रीबी ख़ौफ़नाक तरीक़े से बढ़ती है। इस व्यवस्था के भीतर कोई भविष्य मुमकिन नहीं है।

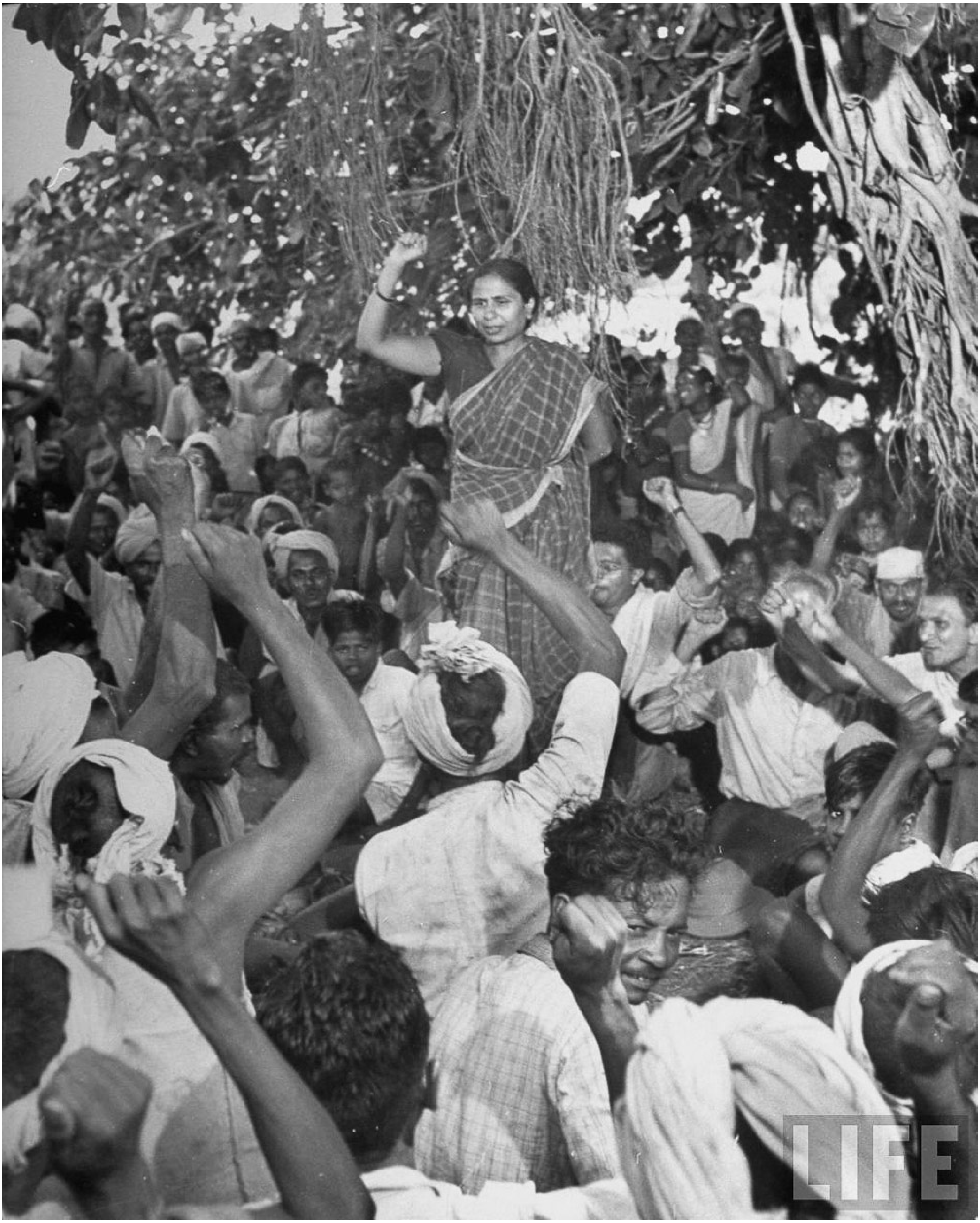


मार्गरेट बोर्के-व्हाइट, गोदावरी पारुलेकर ठाणे में अखिल भारतीय किसान सभा के जत्थे को संबोधित करती हुईं, 1945।

समाज व्यवस्थित करने का बेहतर तरीक़ा संभव हो सकता है। यही समाजवाद की महान संभावना है, ये उम्मीद कि हम इस घिनौनी सामाजिक व्यवस्था से परे जा सकते हैं जो अरबों लोगों को वंचित रखती है। 1983 की फ़िल्म मज़दूर के लिए हसन कमाल ने इस भावना को अभिव्यक्त करने वाला एक गीत लिखा :

> हम मेहनतकश इस दुनिया से जब अपना हिस्सा माँगेंगे
>
> एक बाग़ नहीं, एक खेत नहीं, हम सारी दुनिया माँगेंगे।

असांजे

जूलियन असांजे की प्रत्यर्पण सुनवाई 7 सितंबर को लंदन में शुरू हुई। संयुक्त राज्य अमेरिका असांजे को 'कंप्यूटर-संबंधित अपराधों' के लिए पकड़ना चाहता है; लेकिन (जैसा कि मैं पहले भी **लिख** चुका हूँ) अमेरिकी सरकार वास्तव में उसे इराक़ और अन्य जगहों पर किए गए अमेरिकी युद्ध अपराधों को उजागर करने के लिए पकड़ना चाहती है। असांजे के उत्पीड़न का मुख़बिरों पर और खोजी पत्रकारिता पर भयावह प्रभाव पड़ा है। ताक़तवर वर्ग यही चाहता है।

कुछ व्यक्तियों के साहस से लोगों में भरोसा पैदा नहीं होता। शांति के विचार पर भरोसा तब पुख़्ता होता है, जब भारत के कम्युनिस्टों की तरह लाखों लोग सड़कों पर उतरते हैं। यही कारण है कि हम उन प्रकाशकों और पत्रकारों का साथ देते हैं जो जन आंदोलनों के साथ मिलकर, ताक़तवर वर्ग के भयावह रहस्यों को जनता के सामने लाते हैं।

स्नेह-सहित,

विजय।

**मैं हूँ ट्राईकॉन्टिनेंटल:**

**डैन्येला रुग्गेरी, डिज़ाइनर। इंटर-रीजनल ऑफ़िस :**

पिछले कुछ हफ्तों में मैं "द वेन्स ओफ़ द साउथ आर स्टिल ओपन" और "मारीटेगुई" के स्पेनिश संस्करणों के ई–बुक बनाने पर काम कर रही हूं; इस प्रक्रिया से मुझे बहुत कुछ सीखने को मिला है। ब्यूनस आयर्स कार्यालय द्वारा कोरोनाशॉक संबंधी लेखों के ऑनलाइन प्रकाशन "फ्यूचर्स पेन्सडोस" में आर्ट वर्क करने का मेरा अनुभव अच्छा रहा। इस प्रकाशन के लिए हमने सात डिजिटल कोलाज बनाए हैं, जो इस सीरीज़ में शामिल लेखों पर आधारित हैं। मैंने ये कोलाज बनाने के लिए 20 वीं शताब्दी की प्रमुख लैटिन अमेरिकी कलाकृति, 19 वीं शताब्दी के इलस्ट्रेशंज़ और आज की तस्वीरों पर काम किया। कोलाज विभिन्न छवियों के बीच संवाद का खेल है, जो दर्शक को विचारों और अवधारणाओं के पार ले जाता है।

.